315hi10

10

मुगल शासन की स्थापना

पिछले अध्याय में आपने दिल्ली सल्तनत की स्थापना (1206–1526) और संघटन के संबंध में पढ़ा। इस अवधि के दौरान शासक थे, तुर्क और अफ़गान। आपने ध्यान दिया होगा कि सम्पूर्ण सल्तनत शासन की अवधि के दौरान विविध तुर्क समूहों और अफगानों के बीच परस्पर संघर्ष ही होता रहा। दिल्ली सल्तनत समाप्त होने के कारण यहाँ विभिन्न प्रादेशिक शक्तियों का उद्भव हो गया था। इसलिए, जब 1526 में बाबर ने भारत पर आक्रमण किया तो दिल्ली सल्तनत की केन्द्रीय शक्ति मूलतः बहुत क्षीण हो गई थी और प्रादेशिक स्तर पर अनेक स्वतंत्र साम्राज्य पैदा हो गए थे। दिल्ली और उसके आसपास के क्षेत्र सुल्तान इब्राहिम लोधी के अधीन थे। अन्य महत्त्वपूर्ण साम्राज्य थे गुजरात, मालवा, बंगाल, बीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर, बरार, मेवाड़ और दक्षिण में विजयनगर का साम्राज्य। इसके अतिरिक्त बहुत बड़ी संख्या में छोटे–छोटे स्वयंभू राजा भी थे जो देश के विभिन्न भागों पर शासन कर रहे थे।

इस पाठ में हम जानेंगे कि भारत पर मुगल शासक वंश ने कैसे विजय प्राप्त की। मुगलों का नेत त्व मध्य एशिया से आए एक बहुत ही योग्य सेनापति और प्रशासक ज़हीरुद्दीन मोहम्मद बाबर के हाथों में था। उसके उत्तराधिकारी धीरे–धीरे सम्पूर्ण भारत में एकछत्र राज्य स्थापित करने में सफल हो गए थे। आइए भारत में बाबर के आगमन से शुरुआत करते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद आप :

- बाबर की उन परिस्थितियों के बारे में बता सकेंगे जिसमें उसने भारत में प्रवेश किया;
- भारतीय शासकों पर मुगलों की जीत की सफलता के कारण बता सकेंगे;
- बाबर की म त्यु के पश्चात् हुमायूँ को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ा, उसका परिचिय दे सकेंगे;
- उन परिस्थितियों का विश्लेषण कर सकेंगे जिनके अधीन बाबर को हार स्वीकार करनी पड़ी और अफ़गानों की शक्ति का पुनरुद्धार हुआ;

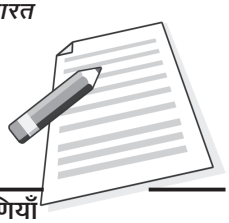

- हुमायूँ द्वारा दोबारा भारत पर विजय प्राप्त करने से संबंधित घटनाओं का वर्णन कर सकेंगे;
- अकबर के अधीन मुग़ल साम्राज्य के विस्तार और संघटन की परिस्थितियों का आकलन कर सकेंगे;
- औरंगज़ेब के शासन काल तक राज्य के प्रादेशिक विस्तार का विस्त त वर्णन कर सकेंगे; और
- भारत में मुग़ल साम्राज्य को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ा। इसका विश्लेषण कर सकेंगे।

10.1 बाबर का आगमन (1526-30)

सन् 1494 में बारह व़र्ष की उम्र में, अपने पिता की म त्यु के उपरान्त, बाबर ट्रांसौक्सियाना में एक छोटी सी जागीर फ़रग़ाना की राजगद्दी पर बैठा। मध्य एशिया में उस समय बहुत अस्थिरता थी और बाबर को अपने ही अभिजात वर्ग से विरोध का सामना करना पड़ा। य़द्यपि वह समरक़न्द को जीतने के लिए समर्थ था, परन्तु बहुत जल्द ही उसे पीछे हटना पड़ा क्योंकि उसके अपने ही कुलीनों ने साथ छोड़ दिया था। उसे उज़बेगियों के हाथों फरग़ाना को हारना पड़ा।

तिमूरियन (तिमूर वंश)

बाबर, मध्य एशिया को जीतने वाले महान विजेता तिमूर और बहुत ही विशिष्ट महान विजेता चंगे़ज़ ख़ान के वंश से था। अपनी माता के पक्ष से वह मंगोल वंश से संबंधित था और पिता की ओर से महान सेनानायक तिमूर से। तिमूर वंश से संबद्ध होने के कारण मुगलों को तिमूरियन भी कहा जाता है।

मध्य एशिया में बाबर को शासन के प्रारंभिक काल में बहुत कठिन संघर्ष करना पड़ा। इस पूरी अवधि के दौरान वह हिन्दोस्तान की तरफ बढ़ने की योजनाएँ बनाता रहा। और अंत में 1517 में बाबर ने भारत की ओर बढ़ने का द ढ़ निश्चय कर लिया। भारत में उस दौरान हुई कुछ उथल–पुथल ने भी बाबर को भारत पर आक्रमण करने की योजनाओं पर अमल करने में मदद की।

सिकंदर लोदी की म त्यु के उपरान्त उभरी भारत की राजनीतिक अस्थिर परिस्थितियों ने उसे यह सोचने का मौका दिया कि लोदी साम्राज्य में कितना राजनीतिक असंतोष और अव्यवस्था फैली हुई थी। इसी दौरान कुछ अफ़गानी सूबेदारों के साथ परस्पर संघर्ष हुआ। उनमें से एक प्रमुख सूबेदार था दौलतख़ान लोदी, जो पंजाब के एक विशाल भूभाग का सूबेदार था। मेवाड़ का राजपूत राजा राणा सांगा भी इब्राहिम लोदी के खिलाफ अधिकार जताने के लिए ज़ोर–अज़माइश कर रहा था और उत्तर भारत में अपने प्रभाव का क्षेत्र बढ़ाने की कोशिश कर रहा था। उन दोनों ने ही बाबर को संदेश भेजकर उसे भारत पर आक्रमण करने का न्यौता दिया। राणा सांगा और दौलत खान लोदी के आमंत्रण ने शायद बाबर को उत्साहित किया होगा।

बाबर भीरा (1519-1520), सियालकोट (1520) और पंजाब में लाहौर (1524) को जीतने में कामयाब हुआ। अन्त में, इब्राहिम लोदी और बाबर की सेनाओं का सामना 1526 में पानीपत में हुआ। बाबर की सेना में कम संख्या में सैनिकों के बावजूद उनकी सैनिक व्यवस्था बहुत ही श्रेष्ठ थी। पानीपत की लड़ाई में बाबर की जीत उसकी सैनिक पद्धतियों की एक बड़ी जीत थी। बाबर की सेना में 12000 सैनिक थे जबकि इब्राहिम के पास औसतन 1,00,000 सैनिक बल था। युद्ध के मैदान में आमने सामने की लड़ाई में बाबर की युद्ध नीतियाँ बहुत ही अद्वितीय थीं। उसने युद्ध लड़ने के लिए रुमी (आटोमैन) युद्ध पद्धति को अपनाया। उसने इब्राहिम की सेना को दो पंक्तियों से घेर लिया। बीच में से उसके घुड़सवारों ने तीरों से और अनुभवी ओटोमैन तोपचियों ने तोपों से आक्रमण किया। खाइयों और राह में खड़ी की गई बाधाओं से सेना को दुश्मन के विरुद्ध आगे बढ़ने में बचाव का काम किया। इब्राहिम लोदी की अफ़गानी सेना के बहुत भारी संख्या में सैनिक मारे गए। इब्राहिम लोदी की युद्ध के मैदान में ही म त्यु हो गई और इस प्रकार दिल्ली और आगरा पर बाबर का नियंत्रण हो गया और लोदी की अपार सम्पदा पर भी इसका कब्ज़ा हो गया। इस धन को बाबर के सेनापतियों और सैनिकों में बाँट दिया गया था।

पानीपत की विजय ने बाबर को अपनी विजयों को संघटित करने के लिए एक द ढ़ आधार प्रदान किया। परन्तु इस समय उसको इन समस्याओं का सामना करना पड़ा :

1. उसके कुलीन वर्ग के लोग और सेनापति मध्य एशिया में वापस लौटने के लिए उत्सुक थे क्योंकि उन्हें भारत का वातावरण पसंद नहीं था। सांस्क तिक द ष्टि से भी वे खुद को अजनबी महसूस करते थे।

2. राजपूत मेवाड़ के राजा राणा सांगा के नेत त्व के अधीन अपनी शक्ति को एकजुट करने में लगे हुए थे और मुगल सेनाओं को खदेड़ना चाहते थे।

3. अफ़गानियों को यद्यपि पानीपत में हार का मुँह देखना पड़ा परन्तु अभी भी उनकी सेनाएँ उत्तर प्रदेश के पूर्वी भागों, बिहार और बंगाल में शक्तिशाली बनी हुई थीं। वे अपनी खोई शक्ति को पुनः संगठित करने में लगे हुए थे।

प्रारम्भ में बाबर ने अपने साथियों और कुलीनों को वहीं रुके रहने के लिए और जीते गए प्रदेशों को संगठित करने में उसकी मदद करने के लिए राज़ी कर लिया। इस कठिन काम में सफलता हासिल करने के बाद उसने अपने पुत्र हुमायूँ को पूर्व में बसे अफगानियों का सामना करने के लिए भेजा। मेवाड़ के राणा सांगा बहुत बड़ी संख्या में राजपूत राजाओं का समर्थन एकत्रित करने में सफल हो गए थे। इनमें प्रमुख थे जालौर, सिरोही, डूंगरपुर, अम्बर, मेड़ता इत्यादि। चन्देरी के मेदिनी राय, मेवात के हसन खान और सिकंदर लोदी के छोटे बेटे महमूद लोदी भी अपनी सेनाओं सहित राणा सांगा के साथ आ मिले। शायद, राणा सांगा को आशा थी कि बाबर काबुल वापस चला जाएगा। बाबर के यहीं रुके रहने से राणा सांगा की महत्त्वाकांक्षाओं को गहरा झटका लगा। बाबर को भी पूरी तरह यह समझ आ गया था कि जब तक राणा की शक्ति को क्षीण नहीं किया जाएगा तब तक भारत में अपनी स्थिति को संगठित करना उसके लिए असंभव होगा। बाबर और राणा सांगा की सेनाओं का मुकाबला, फतेहपुर सिकरी के पास एक स्थान, खनवा में हुआ। सन् 1527 में राणा सांगा की हार हुई और एक बार फिर बाबर की

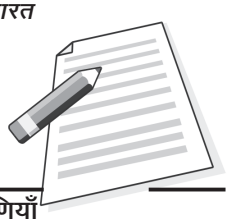

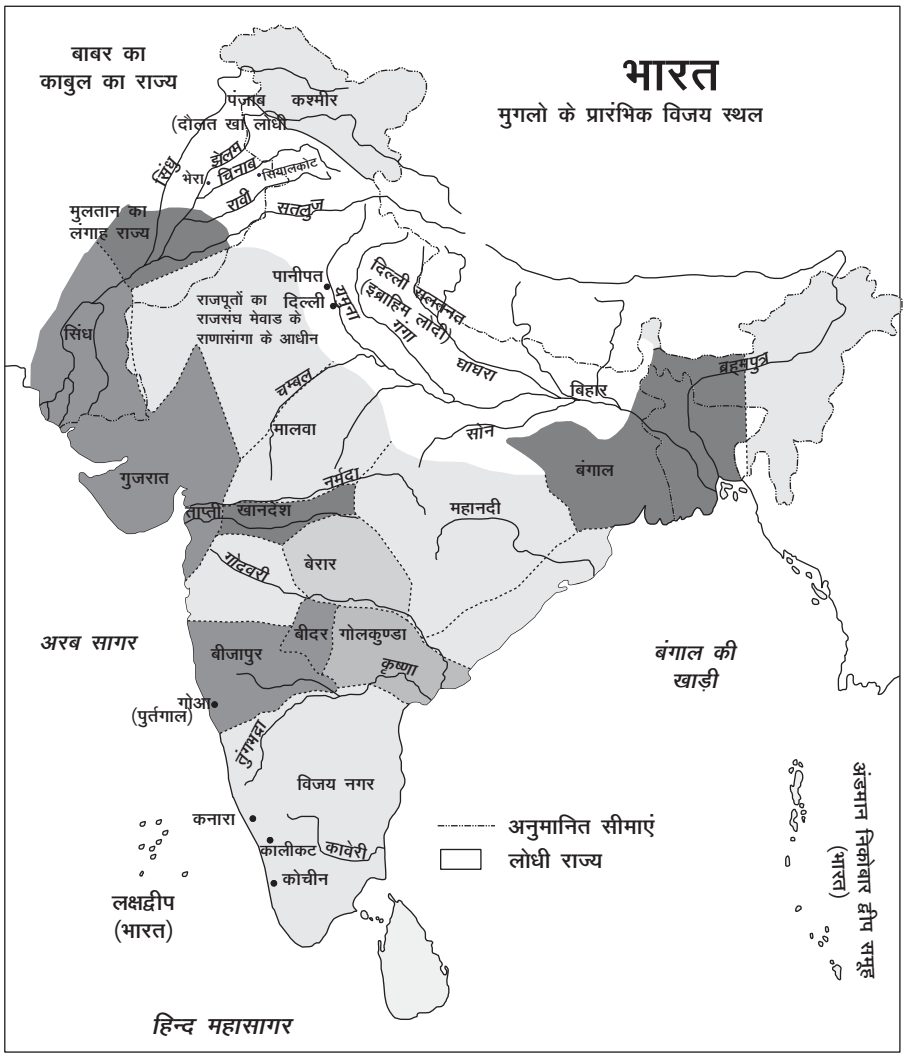

मानचित्र 10.1 मुगलों के प्रारंभिक विजय स्थल

बेहतरीन सैनिक युक्तियों के कारण उसे सफलता मिली। राणा की हार के साथ ही उत्तर भारत में उसे सबसे बड़ी चुनौती देने वाली ताकत बिखर गई।

यद्यपि मेवाड़ के राजपूतों को खनवा में गहरा आघात लगा, परन्तु मालवा में मेदिनी राय अभी भी बाबर को चुनौती दे रहा था। जिस बहादुरी से राजपूतों ने चंदेरी में (1528) युद्ध किया बाबर को मेदिनी राय पर विजय प्राप्त करने में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ा। इसकी हार के बाद राजपूतों की ओर से विरोध का स्वर बिल्कुल समाप्त हो गया था। पर अभी भी बाबर को अफ़गानियों को हराना था। अफ़गानियों ने दिल्ली पर अपना अधिकार छोड़ दिया था। परन्तु पूर्व (बिहार और जौनपुर के कुछ भाग) में वे अभी भी काफी शक्तिशाली थे। अ़फ़गानों और राजपूतों पर पानीपत और खनवा में जीत बहुत ही महत्त्वपूर्ण थी परन्तु विरोध के स्वर अभी भी मौजूद थे। परन्तु अब हम यह कह सकते हैं कि यह जीत मुगल साम्राज्य की स्थापना की दिशा में आगे बढ़ने के लिए महत्त्वपूर्ण कदम था। सन् 1530 में बाबर की म त्यु हो गई। अभी भी गुजरात, मालवा और बंगाल के शासकों के पास

काफी सशक्त सैनिक बल था और उनका दमन नहीं हो सका था। इन प्रादेशिक शक्तियों का मुकाबला करने का काम हुमायूँ के सामने अभी बाकी था।

पाठगत प्रश्न 10.1

1. बाबर ने भारत पर आक्रमण क्यों किया?

2. पानीपत में बाबर की युद्ध रणनीति क्या थी?

3. पानीपत की लड़ाई के बाद बाबर को किन समस्याओं का सामना करना पड़ा?

4. राजपुताना के कौन से दो शासकों को बाबर ने हराया?

10.2 हुमायूँ का पीछे हटना और अफ़गानों का पुनर्जागरण (1530-1540)

सन् 1530 में बाबर की म त्यु के उपरान्त उसका पुत्र हुमायूँ उत्तराधिकारी बना। हुमायूँ के अधीन परिस्थितियाँ काफी निराशाजनक थीं। हुमायूँ ने जिन समस्याओं का सामना किया वे थीं :

1. नए जीए गए प्रदेशों का प्रशासन संगठित नहीं था।
2. बाबर की तरह हुमायूँ को उतना सम्मान और मुगलों के आभिजात्य वर्ग से इतनी इज़्ज़त नहीं मिल पाई।
3. चुगतई आभिजात्य वर्ग उसके पक्ष में नहीं था और भारतीय कुलीन, जिन्होंने बाबर की सेवाएँ ग्रहण की थीं, उन्होंने हुमायूँ को राजसिंहासन मिलने पर मुगलों का साथ छोड़ दिया था।
4. उसे अफगानियों की दुश्मनी का भी सामना करना पड़ा, मुख्यतः बिहार में एक तरफ थे शेर खान तो दूसरी तरफ था गुजरात का शासक बहादुरशाह।
5. तैमूरी परम्पराओं के अनुसार उसे अपने साथियों के साथ बाँट कर शक्तियों पर अधिकार पाना था। नवस्थापित मुगल साम्राज्य के दो केन्द्र थे–दिल्ली और आगरा मध्य भारत का नियन्त्रण हुमायूँ के हाथ में था तो अफगानिस्तान और पंजाब उसके भाई कामरान के अधीन था।

हुमायूँ ने महसूस किया कि अफगानी उसके लिए एक बड़ा खतरा थे। वह पूर्व और पश्चिम से अफगानियों के संयुक्त विरोध से बचना चाहता था। उस समय तक बहादुरशाह ने भीलसा, रायसेन, उज्जैन और जगरौन पर कब्जा कर लिया था और वह अपनी शक्ति का संयोजन कर रहा था। जबकि हुमायूँ पूर्व में चुनार में घेराबंदी कर रहा था, वहीं बहादुरशाह

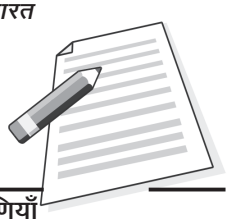

मालवा और राजपूताना की तरफ पांव फैला रहा था। इन परिस्थितियों में हुमायूँ को आगरा वापस आना पड़ा (1532-33)। विस्तार की नीति को जारी रखते हुए बहादुरशाह ने 1534 में चित्तौड़ पर आक्रमण कर दिया। युद्ध नीति की द ष्टि से चित्तौड़ एक मज़बूत आधार स्थल होने का फायदा उपलब्ध करवा सकता था। इससे उसे राजस्थान, विशेष रुप से अजमेर, नागौर और रणथम्भौर की ओर बढ़ने में मदद मिल सकती थी। हुमायूँ ने मांडू पर जीत हासिल कर ली और यहीं पर शिविर बना लिया क्योंकि उसने सोचा कि यहाँ रहकर वह बहादुरशाह की गुजरात वापसी के रास्ते में रुकावट बन सकता है। आगरा से लम्बी अवधि तक उसके अनुपस्थित रहने के कारण दोआब और आगरा में बगावत शुरु हो गई और उसे तुरंत वापस लौटना पड़ा। माण्डू का नियन्त्रण अब हुमायूँ के भाई मिर्ज़ा असकरी की सरपरस्ती में छोड़ा गया था। जिस अवधि के दौरान हुमायूँ गुजरात में बहादुरशाह की गतिविधियों की निगरानी रख रहा था, उस अवधि में शेरशाह ने बंगाल और बिहार में अपनी शक्ति का संगठन शुरु कर दिया था।

शेरशाह सूरी का उद्‌भव

फरीद, बाद में जिसे शेर खान और अंत में शेरशाह कहा जाने लगा था, जौनपुर साम्राज्य के अधीन एक जागीरदार का पुत्र था। उसके पिता हसन खान सूर, लोदी शासन के अधीन बिहार में सासाराम के जागीरदार थे। शेरशाह अपने पिता की जागीर के प्रशासकीय कार्यों में उसकी मदद करते थे। बाद में उसको अपने पिता से संबंधों में मतभेद हो गया और वह उनको छोड़कर चला गया। उसने अफगानी कुलीन के अधीन सेवा करनी शुरू कर दी। 1524 में उसके पिता की म त्यु के बाद इब्राहिम लोदी ने उसे उसके पिता की जागीर दे दी। जागीर का कब्ज़ा लेने के लिए उसे अपने परिवार के साथ लड़ाई करनी पड़ी। उसने अपने पिता की जागीर को बहुत ही प्रभावी ढंग से व्यवस्थित किया। उसने सैनिक और प्रशासकीय कौशल में बहुत दक्षता हासिल कर ली थी। उसकी योग्यता ने उसे अफगानियों का नेता बना दिया। धीरे–धीरे उसका प्रभाव बढ़ता गया और बंगाल के महमूद शाह को हरा दिया। पूर्वी प्रदेशों में वह बहुत ही शक्तिशाली सैनिक कमांडर बनकर उभरा। शेरशाह बिहार में अपनी स्थिति मजबूत करने का प्रयास करता रहा। उसे बिहार में कई प्रमुख अफगानी अभिजात्यों और बंगाल के शासक से अनेक लड़ाइयाँ लड़नी पड़ी। और अंत में वह पूर्वी भारत में खुद को अत्यन्त शक्तिशाली अफ़गानी प्रमुख के रूप में स्थापित करने में सफल हुआ।

शेरशाह खुद को एक निर्विवाद अफगानी नेता के रुप में स्थापित करना चाहता था। उसने बंगाली सेना पर आक्रमण किया और सूरजगढ़ की लड़ाई में उनको हरा दिया। शेरशाह ने बंगाल से बहुत बड़ी धन–सम्पदा हासिल की जिसने उसे एक बड़ा सैन्य बल खड़ा करने में मदद की। अब उसने बनारस और उससे परे के मुगल प्रदेशों पर आक्रमण करना शुरु कर दिया। हुमायूँ को शेरशाह की महत्त्वाकांक्षाओं पर संदेह तो था परन्तु वह उसकी क्षमताओं का अनुमान नहीं लगा पाया। उसने अपने जौनपुर के गवर्नर हिन्दु बेग से कहा कि वह शेरशाह की गतिविधियों पर नजर रखे। इस बीच शेरशाह ने (1538 में) बंगाल की राजधानी गौड़ पर जीत हासिल कर ली। जब हुमायूँ बंगाल की तरफ बढ़ रहा था तो शेरशाह ने आगरा के मार्ग पर नियंत्रण कर लिया और हुमायूँ के लिए संचार

मानचित्र 10.2 शेरशाह का साम्राज्य

संबंधी कार्यों में बाधा उत्पन्न कर दी। दूसरी तरफ हुमायूँ के भाई हिंदल मिर्जा ने खुद को स्वतंत्र घोषित कर दिया। अब हुमायूँ ने चुनार वापस लौटने का फैसला कर लिया जिसने उसकी सेना के लिए रसद की पूर्ति करनी थी। जब वह चौसा पहुँचा (1539), तो उसने कमनासा नदी के पश्चिमी किनारे पर शिविर बनाया। शेरशाह ने नदी के किनारे जाकर हुमायूँ पर आक्रमण करके उसे हरा दिया। शेरशाह ने खुद को स्वतन्त्र राजा घोषित कर दिया। हुमायूँ बच सकता था, परन्तु उसकी अधिकांश सेना नष्ट हो चुकी थी, बहुत मुश्किल से वह आगरा पहुँच पाया। उसका भाई कामरान आगरा से निकलकर लाहौर की तरफ बढ़ गया था और हुमायूँ बहुत थोड़ी–सी सेना के साथ अकेला रह गया। अब शेरशाह भी आगरा की तरफ बढ़ने लगा। हुमायूँ भी अपनी सेना को लेकर आगे बढ़ने लगा और दोनों सेनाओं का कन्नौज में टकराव हुआ। कन्नौज की लड़ाई में हुमायूँ की बुरी तरह हार हुई (1540)।

10.3 द्वितीय अफ़गानी साम्राज्य

जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि लोदी वंश के अधीन पहले अफ़गानी साम्राज्य को बाबर के नेत त्व में मुगलों द्वारा 1526 में स्थापित किया गया था। 14 वर्ष

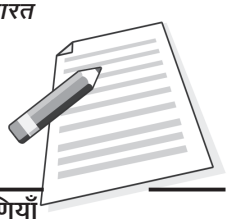

के अंतराल के पश्चात 1540 में शेरशाह भारत में दोबारा अफ़गानी शासन स्थापित करने में सफल हुआ। शेरशाह और उसके उत्तराधिकारियों ने 15 वर्ष तक राज किया। इस अवधि को द्वितीय अफ़गानी साम्राज्य काल के रुप में जाना जाता है। इस अफ़गानी शासन का संस्थापक शेरखान रण–कौशल में कुशल और योग्य सेना नायक था। हुमायूँ से उसकी लड़ाई के संबंध में हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं। हुमायूँ को हराने के बाद 1540 में शेरशाह सर्वप्रभुतासम्पन्न शासक बन गया और उसे शेरशाह का खिताब दिया गया।

शेरशाह ने उत्तर पश्चिम में सिंध तक की चढ़ाई में हुमायूँ का पीछा किया। हुमायूँ को खदेड़ने के बाद उसने उत्तरी और पूर्वी भारत में संघटन का काम शुरु कर दिया था। 1542 में उसने मालवा पर विजय प्राप्त की और तत्पश्चात चन्देरी को जीता। राजस्थान में उसने मारवाड़, रणथम्भौर, नागौर, अजमेर, मेड़ता, जोधपुर और बीकानेर के विरुद्ध लड़ाई लड़ी। उसने बंगाल में बागी अफगानियों को हराया। 1545 तक उसने सिंध और पंजाब से लेकर पश्चिम में लगभग पूरे राजपुताना पर और पूर्व में बंगाल तक के क्षेत्र में, खुद को सर्वोच्च शासक के रुप में स्थापित कर लिया था। अब वह बुंदेलखंड की ओर मुड़ा। यहाँ कालिंजर के किले की घेराबंदी के दौरान 1545 में एक बारुदी विस्फोट की दुर्घटना में उसकी म त्यु हो गई।

अपने संक्षिप्त शासन काल में शेरशाह ने बहुत महत्त्वपूर्ण प्रशासकीय और लगान पद्धतियों में परिवर्तन लागू किए। उनमें से कुछ प्रमुख हैंः

1. सरकारों और परगना स्तर पर स्थानीय प्रशासन को व्यवस्थित करना।
2. मुख्य मार्गों पर यात्रियों और व्यापारियों के लिए सड़कों और सरायों या विशाल स्थलों का निर्माण कराया जिनसे संचार स्थापित करने में भी सहायता मिली। उसने पेशावर से कोलकाता तक ग्रांड ट्रंक (जी.टी.) रोड का निर्माण कराया।
3. मुद्रा प्रणाली, भूमि के मापन और लगान के आकलन के उपायों का मानकीकरण।
4. सेना का पुनर्गठन और घोड़ों को दागने की प्रथा को पुनः शुरु करना, और
5. न्यायिक प्रणाली को व्यवस्थित करना।

शेरशाह का उत्तराधिकारी बना उसका पुत्र इस्लाम शाह। इस्लाम शाह को अपने भाई आदिल खान और कई अन्य अफगानी आभिजात्यों के साथ अनेक लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। 1553 में उसकी म त्यु हो गई। धीरे–धीरे अफगानी साम्राज्य शक्तिहीन होता गया। इसी मौके का फायदा उठाकर हुमायूँ ने फिर भारत की तरफ बढ़ना शुरु कर दिया। 1555 तक आते–आते उसने फिर से अपना खोया साम्राज्य वापिस छीन लिया और द्वितीय अफगानी साम्राज्य को समाप्त कर दिया।

1555 में हुमायूँ ने आगरा और दिल्ली पर विजय प्राप्त की और भारत में खुद को बादशाह के रुप में स्थापित कर लिया। अपनी स्थिति को वह पूरी तरह संगठित कर पाता उससे पहले ही 1556 में शेर मंडल पुस्तकालय (दिल्ली में) की सीढ़ियों से गिरकर उसकी म त्यु हो गई।

पाठगत प्रश्न 10.2

1. ृशेरशाह को हराने में हुमायूँ असफल क्यों हुआ?

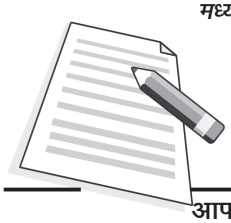

आपकी टिप्पणियाँ

2. अफगानियों के नेता के रुप में शेरखान कैसे उभरा?

3. शेरशाह के शासन के अधीन शामिल प्रदेशों की सूची बनाएँ।

4. शेरशाह की दो महत्त्वपूर्ण सफलताओं का नाम लिखें?

10.4 अकबर से औरंगजेब तक मुगल साम्राज्य

अकबर

हुमायूँ की म त्यु के समय अकबर केवल तेरह वर्ष का था। जब उसके पिता की म त्यु हुई, अकबर पंजाब में कलानौर में था इसलिए 1556 में उसका राज्यभिषेक कलानौर में ही हुआ। उसके शिक्षक और हुमायूं के प्रिय और विश्वासपात्र बैरम खान ने 1556 से 1560 तक मुगल साम्राज्य के दरबारी प्रशासक की तरह काम किया। उसने खान–ए–खाना की उपाधि प्राप्त कर के राज्य में वकील का पद हासिल किया। उसकी दरबारी प्रशासन की अवधि के दौरान उसकी प्रमुख सफलताओं में से एक थी 1556 में पानीपत के दूसरे युद्ध में हेमू और अफ़गानी सेनाओं की हार, जो कि मुगल साम्राज्य के लिए एक बहुत गंभीर खतरा बनी हुई थी।

बैरम खान का दरबारी प्रशासन (रीजेन्सी) 1556-1560

बैरम ख़ान मुगल साम्राज्य के सभी मामलों में लगभग चार वर्षों तक सबसे ऊंचे स्थान पर रहा और इस अवधि को बैरम ख़ान की दरबारी प्रशासन के काल के रूप में जाना जाता है। इस काल खंड में उसने अपने प्रिय कुलीनों को महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया। बैरम ख़ान बहुत ही शक्तिशाली दरबारी प्रशासक के रूप में उभरा। वह बहुत ही घमंडी बन गया। आभिजात्यों का एक वर्ग उसका विरोधी हो गया था। उन्होंने अकबर को भी अपनी बातों से प्रभावित कर दिया था। इस समय तक अकबर भी सब कुछ अपने पूरे नियंत्रण में लेना चाहता था। उसने बैरम खान को हटा दिया। बैरम खान ने प्रतिरोध किया परन्तु हार गया। अकबर ने उसे माफ कर दिया और सेवानिव त्त होने का अनुरोध किया। उसने हज के लिए मक्का जाने का फैसला किया। अहमदाबाद के पास एक अफ़गानी द्वारा उसकी हत्या कर दी गई। उसका बेटा बाद में अकबर के दरबार में एक बहुत ही प्रभावशाली दरबारी बना और अब्दुर रहीम खान–ए–खाना के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

अपनी प्रारंभिक समस्याओं को हल करने और राज्य पर अपना पूरा नियंत्रण स्थापित करने के बाद अकबर ने विस्तार की नीति अपनाई। उस समय देशों में फैली कुछ मुख्य राजनीतिक शक्तियां थीं:

1. वे राजपूत जो पूरे देश में स्वतंत्र सूबेदारों और राजाओं के रुप में फैले हुए थे और मुख्य रुप से राजस्थान में केंद्रित थे।

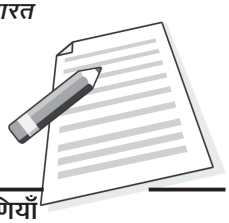

2. अफगानियों ने मुख्यतः गुजरात, बिहार और बंगाल पर राजनीतिक नियंत्रण कर रखा था।
3. खानदेश, अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुंडा और दक्षिण भारत के कुछ अन्य साम्राज्य और दक्कन बहुत ही शक्तिशाली थे।
4. काबुल और कंधार पर यद्यपि मुगल गुटों का शासन था पर वे अकबर से दुश्मनी रखते थे।

अकबर ने बहुत ही व्यवस्थित नीति से साम्राज्य को फैलाने का काम शुरु कर दिया। बैरम खान को बर्खास्त करने के बाद अकबर का पहला कदम था अपने अभिजात्य वर्ग से संघर्ष समाप्त करना। इसके नियंत्रण के लिए उसने अत्यंत कूटनीतिक कौशल और संगठनात्मक योग्यताओं का प्रदर्शन किया। अपनी विस्तार की नीति की शुरुआत उसने मध्य भारत से की। 1559-60 में अकबर ने, अपने पहले अभियान दल को मालवा की तरफ बढ़ने से पूर्व ग्वालियर को जीतने के लिए भेजा। मध्य भारत में मालवा पर उस समय बाज बहादुर का शासन था। इसके विरुद्ध लड़ाई के अभियान पर अकबर ने आधम खान को तैनात किया। बाज बहादुर हार गया और बुरहानपुर की तरफ भाग गया। गोंडवाना, दलपत शाह की विधवा रानी दुर्गावती द्वारा शासित मध्य भारत का स्वतंत्र प्रदेश था जिसे जीतने के बाद अकबर ने 1564 में मुगल साम्राज्य में शामिल कर लिया।

राजस्थान

ऐसा लगता है कि अकबर को राजपूत रजवाड़ों के महत्त्व की पूरी जानकारी थी और वह अपने राज्य का बड़े क्षेत्र में विस्तार करने की अपनी महत्तवाकांक्षा को पूरा करने के लिए उन्हें अपना मित्र बनाना चाहता था। जहाँ भी संभव हुआ उसने राजपूतों को जीतने का प्रयास किया और उन्हें मुगल सेवा में नियुक्त किया। उसने भारमल जैसे राजपूत राज–परिवारों के साथ वैवाहिक संबंध भी स्थापित किए। आमेर (अम्बर) का राजा भारमल अकबर के साथ ऐसे संबंध जोड़ने वाला पहला राजा था। मेड़ता और जोधपुर जैसे राजपूत साम्राज्यों पर भी उसने बहुत आसानी से जीत हासिल कर ली थी। परन्तु मेवाड़ शासक महाराणा प्रताप अभी भी मुगलों के लिए गंभीर चुनौती बने हुए थे और उन्होनें अकबर के सामने हथियार नहीं डाले थे। बहुत लंबे संघर्ष और चितौड़ के किले की घेराबंदी के बाद अकबर मेवाड़ की सेनाओं पर जीत हासिल करने में कामयाब हुआ। बहुत बड़ी संख्या में राजपूत सैनिक युद्ध में मारे गए। परन्तु अभी भी उसे पूरी तरह हराया नहीं जा सका था और कुछ न कुछ प्रतिरोध लंबे समय तक मेवाड़ की ओर से किया जाता रहा था। चितौड़ को हराने के बाद ही रणथम्भौर और कालिंजर को जीता जा सका था। मारवाड़, बीकानेर और जैसलमेर ने भी अकबर के सामने हार मान ली। 1570 तक अकबर ने लगभग पूरे राजस्थान को जीत लिया था। अकबर की सबसे महत्तवपूर्ण सफलता यह थी कि पूरे राजस्थान को अपने अधीन करने के बावजूद राजपूतों और मुगलों में कोई शत्रुता नहीं थी। इस सब कारणों के सबंध में हम इस पाठ में आगे चर्चा करेंगे।

अफगान (गुजरात, बिहार और बंगाल)

अफगानियों के खिलाफ जंग अकबर ने 1572 में शुरु की थी। वहां के राजकुमारों में से एक राजकुमार इत्तिमाद ख़ान ने अकबर को आमंत्रित किया था कि वह वहाँ आकर

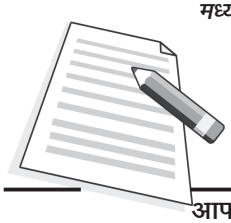

आपकी टिप्पणियाँ

इसे जीत ले। अकबर खुद अहमदाबाद पहुँचां। किसी विशेष विरोध के बगैर ही अकबर ने नगर को जीत लिया। सूरत ने मजबूत किलेबंदी करके कुछ विरोध जताया परन्तु उस पर भी अकबर ने जीत हासिल कर ली। बहुत छोटी सी अवधि के दौरान अकबर ने गुजरात के अधिकांश रजवाड़ों पर कब्जा कर लिया। अकबर ने गुजरात को संगठित करके उसे एक प्रदेश बना दिया और इसे मिर्जा अजीज कोका के शासन के अधीन करके, खुद राजधानी वापस आ गया। छह महीने की अवधि में अनेक बागी गुटों ने एकता कर ली और मिलकर मुगल शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और मुगल सूबेदार को कई प्रदेशीय क्षेत्रों से अपना कब्ज़ा छोड़ना पड़ा। बागियों के नेता थे, इख्तियार–उल–मुल्क और मोहम्मद हुसैन मिर्ज़ा। अकबर ने आगरा में विद्रोह की खबर सुनी, तो वह अहमदाबाद के लिए निकल पड़ा। अकबर बहुत तेज़ गति से आगे बढ़ा और दस दिन के अंदर अहमदाबाद पहुँच गया। बादशाह ने बहुत जल्दी ही विद्रोह को कुचल दिया।

गुजरात के अभियान के बाद बंगाल और बिहार की तरफ रुख किया गया जो अफ़गानियों के नियंत्रण मे थे। 1574 में, अकबर मुनीम खान खान–ए–खाना के साथ बिहार की तरफ बढ़ा। बहुत कम समय में ही हाजीपुर और पटना जीत लिए गए और गौड़ (बंगाल) को भी जीत लिया गया। इसके साथ ही 1576 तक बंगाल में स्वतंत्र शासन समाप्त हो गया था। 1592 तक मुगल मनसबदार राजा मान सिंह ने लगभग पूरे उड़ीसा को मुगल साम्राज्य के अधीन कर दिया था।

1581 में मुगल साम्राज्य के कुछ क्षेत्रों में सिलसिलेवार लड़ाइयाँ शुरु हो गईं। बंगाल, बिहार, गुजरात और उत्तर–पश्चिम असंतोष के मुख्य केन्द्र थे। इस समस्या के मूल में थे अफ़गानी, जिन्हें मुगलों ने हर जगह से बाहर निकाल दिया था। इसके अतिरिक्त, जागीरों के कठोर प्रशासन की अकबर की नीति भी इसके लिए ज़िम्मेदार थी। एक नई नीति अपनाई गई जिसके तहत जागीरदारों को अपनी जागीरों का लेखा प्रस्तुत करने के लिए कहा गया। इससे असंतोष पैदा हो गया और जागीरदार विरोध में खड़े हो गए। मासूम खान काबुली, रौशन बेग, मिर्ज़ा शराफुद्दीन और अरब बहादुर बागियों के मुख्य नेता थे। वहां तैनात शाही अधिकारियों ने इस बगावत को दबाने की कोशिश की मगर कामयाब नहीं हो सके। अकबर ने तत्काल राजा टोडरमल और शेख फरीद बख्शी के अधीन एक बड़ी फौज देकर उन्हें वहाँ भेजा। कुछ समय के बाद, अज़ीज़ कोका और शाहबाज खान को भी टोडरमल की सहायता के लिए भेजा गया। बागियों ने अकबर के भाई हकीम मिर्ज़ा को, जो उस वक्त काबुल में था, अपना राजा घोषित कर दिया। परन्तु शीघ्र ही मुगल सेनाओं ने बिहार, बंगाल और उसके आसपास के क्षेत्रों में विद्रोह को बहुत सफलतापूर्वक दबा दिया।

पंजाब और उत्तर पश्चिम

पंजाब में मिर्ज़ा हाकिम अकबर के लिए समस्या खड़ी कर रहा था और उसने लाहौर पर हमला कर दिया। हाकिम मिर्ज़ा को उम्मीद थी कि बहुत से मुगल अफसर उसका साथ देंगे परन्तु किसी बड़े समूह ने उसका साथ नहीं दिया। अकबर ने खुद लाहौर की तरफ बढ़ने का फैसला किया। हाकिम मिर्ज़ा तुरंत पीछे हट गया और अकबर ने पूरे क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लिया। उसकी सबसे पहली प्राथमिकता रही उत्तर–पश्चिमी सीमांत क्षेत्रों की सुरक्षा व्यवस्थित करना। इसके बाद उसने काबुल की तरफ बढ़ना शुरु किया और उस प्रदेश पर विजय प्राप्त की। काबुल का कार्यभार उसने अपनी बहन बख्तूनिनसा बेगम को

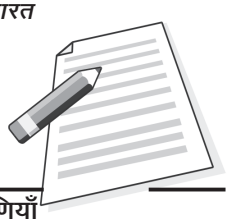

सौपा। बाद में राजा मान सिंह को वहां का सूबेदार तैनात किया गया और उसे जागीर के रुप में इसे दे दिया गया।

उत्तर पश्चिम क्षेत्र में जो अन्य गतिविधि विकसित हुई, वह थी रौशनाइयों की बगावत, जिसने काबुल और हिन्दुस्तान के बीच के मार्ग पर कब्जा कर लिया था। रौशनाई एक सैनिक सिपाही द्वारा स्थापित सम्प्रदाय था जिसे उस प्रदेश में पीर रौशनाई कहते थे। उसका पुत्र उस पंथ का सरदार था जिसके बहुत बड़ी संख्या में अनुयायी थे। अकबर ने, रौशनाइयों को दबाने और वहां मुगलों का नियंत्रण स्थापित करने के लिए बहुत बलशाली फौज का सेनापति बनाकर ज़ायेन ख़ान को वहाँ भेजा। ज़ायेन ख़ान की मदद करने के लिए सईद ख़ान गखड़ और राजा बीरबल को भी अलग–अलग सैनिक टुकड़ियों के साथ वहाँ भेजा गया। एक सैनिक कार्यवाही के दौरान अपने अधिकतर सैनिकों के साथ, बीरबल मारा गया। उसने बगावत को दबाने के लिए राजा टोडरमल और राजा मान सिंह को नियुक्त किया और वे दोनों रौशनाइयों को हराने में कामयाब रहे।

लंबे समय तक अकबर कश्मीर को जीतने के लिए उस पर आँखे गड़ाए रहा। 1586 में कश्मीर मुगल साम्राज्य में शामिल कर लिया गया था।

सिंध में उत्तर–पश्चिम में, अभी भी कुछ रिहायशी क्षेत्र स्वतंत्र थे। 1590 में अकबर ने खान–ए–खाना को मुल्तान का गवर्नर नियुक्त किया और उसे बिलोचियों को हराने के लिए कहा, जो उस क्षेत्र की एक जनजाति थी, और उस पूरे प्रदेशीय क्षेत्र को जीतने का आग्रह किया। सबसे पहले थट्टा पर अधिकार किया गया और 'मुल्तान' के सूबे में उसे सरकार के रुप में स्थापित किया गया। आसपास के क्षेत्रों में बिलूचियों के साथ झड़पें होती रहीं। अन्त में वर्ष 1595 में पूरे उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों पर मुगलों की संपूर्ण सर्वोच्चता स्थापित कर दी गई।

दक्कन

1590 के पश्चात् दक्कन के प्रदेशों को मुगलों के नियंत्रण के अधीन लाने के लिए दक्कन नीति को साकार रुप दिया। इस अवधि के दौरान दक्कन के प्रदेशों में आंतरिक तनाव और निरंतर युद्ध चल रहे थे। 1591 में अकबर ने दक्कन प्रदेशों को उपहार भेजकर यह संदेश भिजवाया कि वे मुगलों की प्रभुसत्ता को स्वीकार कर लें, परन्तु इसमें उसे कोई विशेष सफलता नहीं मिली। अब अकबर ने आक्रमण की नीति अपनाने का निर्णय किया। पहला अभियान अहमदनगर के लिए कूच किया जिसके सेना नायक थे राजकुमार मुराद और अब्दुल रहीम खान खाना। 1595 में मुगल सेनाओं ने अहमदनगर पर आक्रमण कर दिया। इसकी शासिका चांद बीबी ने मुगलों का मुकाबला करने का फैसला किया। उसने सहायता के लिए बीजापुर के इब्राहिम आदिल शाह और गोलकुंडा के कुतुब शाह से संपर्क किया परन्तु उसे कोई सफलता नहीं मिली। घमासान युद्ध हुआ। दोनों तरफ भारी नुकसान होने के बाद एक समझौता किया गया जिसके तहत चांदी बीबी ने बरार मुगलों के हवाले कर दिया। कुछ समय के बाद चांद बीबी ने बरार को वापस लेने के लिए फिर से हमला कर दिया। इस वक्त निज़ामशाही, कुतुबशाही और आदिलशाही टुकड़ियों ने मिलकर मोर्चा संभालने का निर्णय किया। मुगलों को भारी नुकसान हुआ, इसके बावजूद वे अपनी स्थिति बनाए रखने में कामयाब रहे। इस बीच मुराद और खान खाना में आपस में गंभीर मतभेद पैदा होने से मुगलों की ताकत घटने

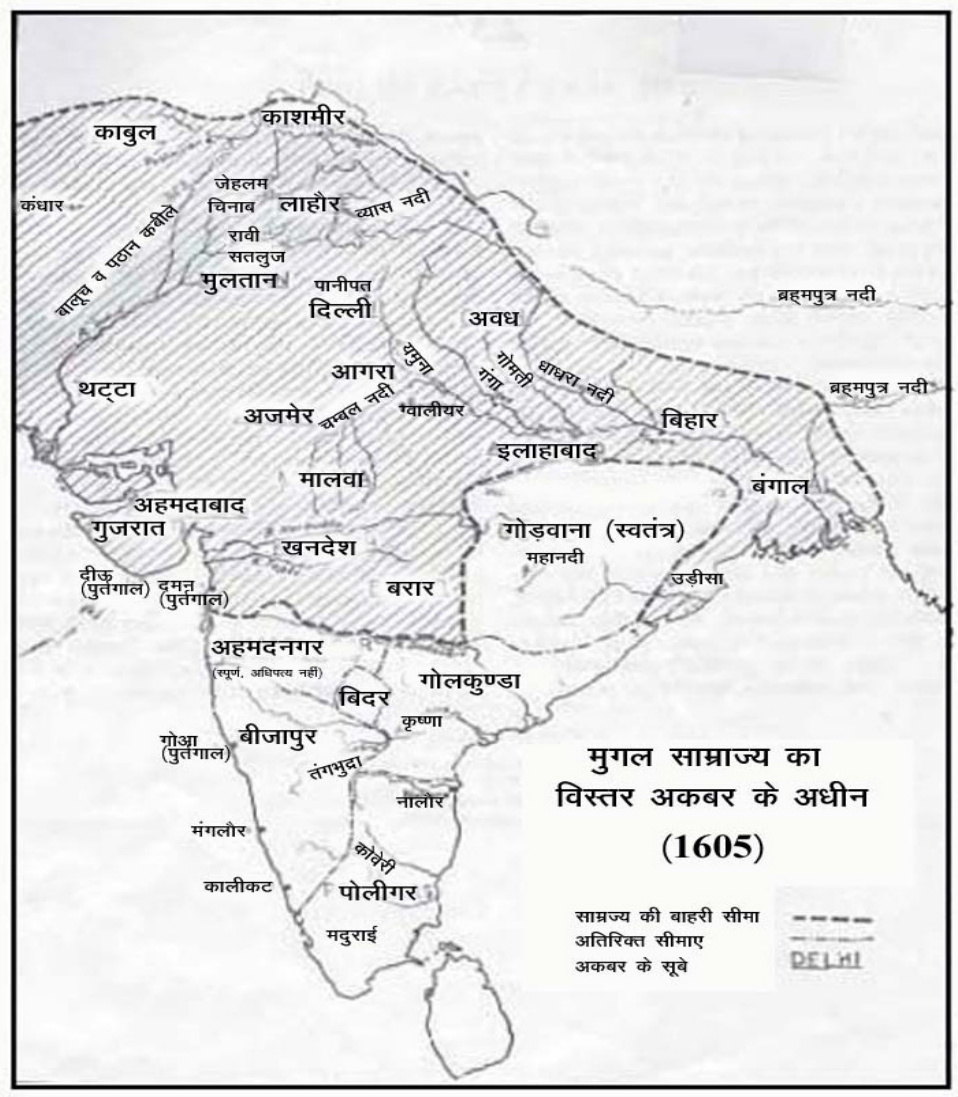

मानचित्र 10.3 अकबर के अधीन मुगल साम्राज्य का विस्तार

लगी। इसीलिए अकबर ने खान खाना को वापिस बुला लिया और दक्कन में अबुल फजल को नियुक्त कर दिया। 1598 में राजकुमार मुराद की म त्यु के बाद, राजकुमार दानियाल और खान खाना को दक्कन भेजा गया। अहमदनगर जीत लिया गया। जल्दी ही मुगलों ने असीरगढ़ और उसके आसपास के क्षेत्रों को जीत लिया। बीजापुर के आदिलशाह ने भी मित्रता दर्शाई और राजकुमार दानियाल से अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव भेजा। इस बीच चांद बीबी का भी देहांत हो गया। अब दक्कन में मुगलों के प्रदेशों में असीरगढ़, बुरहानपुर, अहमदनगर और बरार शामिल थे।

प्रदेशीय विस्तार के साथ–साथ अकबर ने सेना नायकों को मुगल अभिजात्यों में मिलाने की नीति शुरु की। उसकी इस नीति से मुगल साम्राज्य को बहुत फायदा हुआ। मुगल शासक अपनी नई जीतों के लिए सेना नायकों और उनकी सेनाओं की सहायता हासिल करने में कामयाब हो गया। मुगल आभिजात्यों की भूमिका, इतने बड़े साम्राज्य के शासन कार्यों को चलाने के लिए भी मदद के रुप में उपलब्ध थी। इसके अतिरिक्त उनके साथ शांतिपूर्ण संबंधों की वजह से साम्राज्य में शांति भी सुनिश्चित हुई। सेना नायकों को भी

इस नीति से बहुत फायदा हुआ। अब वे अपने अपने क्षेत्रों को अपने पास रखकर अपनी इच्छानुसार शासन कर सकते थे। इसके अतिरिक्त उन्हें जागीर और मनसब भी दिए गए (इन प्रशासकीय उपायों के संबंध में आप पाठ 12, मॉड्यूल 2 में पढ़ेंगे)। उन्हें जागीर में जो प्रदेश दिए जाते थे, वे अकसर उनके अपने साम्राज्यों से बड़े होते थे। इससे उन्हें दुश्मनों और बागियों से भी सुरक्षा प्राप्त हुई। कई मनसबदारों को 'वतन जागीर' के रुप में उन्हें अपना प्रादेशिक क्षेत्र भी दिया गया, जो वंशानुगत था और उसे किसी को हस्तांतरित नहीं किया जा सकता था।

अकबर के अधीन हुए प्रादेशिक विस्तार ने मुगल साम्राज्य को निश्चित आकार दिया। प्रादेशिक विस्तार की बात करें, तो अकबर के बाद बहुत कम प्रदेश साम्राज्य में शामिल हो सके थे। शाहजहां और औरंगजेब के काल में दक्कन और उत्तर पूर्व भारत के कुछ प्रदेश साम्राज्य में शामिल जरुर हुए थे।

पाठगत प्रश्न 10.3

1. अकबर ने बैरम खान को क्यों बर्खास्त किया?

   _____

2. अकबर के राजसिंहासन के समय भारत में कौन–कौन सी राजनीतिक शक्तियां मौजूद थीं?

   _____

3. किन राजपूत शासकों ने अकबर को चुनौती दी थी और हथियार नहीं डाले?

   _____

4. किस महिला शासक ने मुगलों से युद्ध किया? उसने किस प्रदेश पर राज किया?

   _____

जहाँगीर और शाहजहाँ

जहाँगीर ने दक्कन में अकबर की विस्तार नीति को अपनाया। परन्तु कुछ समस्याओं के कारण उसे इस काम में बहुत कम सफलता मिली। खुर्रम की बगावत की वजह से पैदा हुए संकट के कारण वह इस तरफ अधिक ध्यान नहीं दे पाया। दक्कन से कुछ फायदा उठाने के लिए मुगल आभिजात्य वर्ग भी अनेक षड्यंत्रों और लड़ाइयों में शामिल था।

पहले तीन वर्ष के दौरान, दक्कन ने बालाघाट और अहमदनगर के काफी जिलों को फिर से हासिल कर लिया था। मलिक अम्बर इनमें से प्रमुख शासक था जिसने मुगल सेनाओं को हराकर बरार, बालाघाट और अहमदनगर के कुछ भागों को वापस जीता। हारे हुए प्रदेशों पर मुगल फिर दोबारा कब्ज़ा हासिल नहीं कर सके। इस दौरान शाहजहाँ ने अपने पिता के खिलाफ बगावत कर दी और मलिक अम्बर से मित्रता स्थापित कर ली।

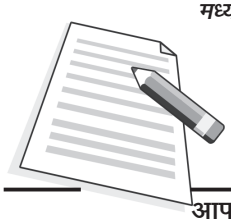

मलिक अम्बर ने अहमदनगर पर कब्ज़ा करने की कोशिश की मगर असफल रहा; उसने आदिलशाह से शोलापुर छीन लिया और शाहजहाँ के साथ मिलकर बुरहानपुर पर कब्ज़ा करने की कोशिश की, परन्तु असफल रहा। एक बार तो जहाँगीर और शाहजहाँ के बीच शांति स्थापित हो गई। मलिक अम्बर भी शांत हो गया। सन 1627 में मलिक अम्बर की म त्यु हो गई और साम्राज्य के 'वकील' और 'पेशवा' के रुप में उसका उत्तराधिकारी बना उसका पुत्र फतेह खान;। फतेह खान बहुत आक्रामक प्रक ति का था और उसके शासन के दौरान दक्कनियों और आभिजात्यों के बीच परसपर लड़ाई शुरु हो गई। जहाँगीर के शासनकाल के दौरान मुगल साम्राज्य में दक्कन से कोई भी प्रदेश शामिल नहीं हो सका। असल में दक्कनी शासकों ने अपने प्रदेशों में मुगल साम्राज्य को बहुत कमज़ोर बना दिया था। मलिक अम्बर की अति महत्त्वाकांक्षा दक्कन प्रदेशों के संयुक्त मोर्चे की राह में एक बड़ी बाधा थी।

जहाँगीर की म त्यु होने और शाहजहाँ के राजसिंहासन पर बैठने की अवधि के दौरान, दक्कन के मुगल सूबेदार खान जहान लोदी ने, जरुरत के वक्त मदद लेने के इरादे से, बालाघाट, निजामशाह को दे दिया। सिंहासन पर बैठने के बाद शाहजहाँ ने खान जहान लोदी को, बालाघाट वापस लेने का आदेश दिया परन्तु वह इसमें असफल रहा, और इसके बाद शाहजहाँ ने उसे दरबार में वापस बुला लिया। इस पर ख़ान जहान उसका दुश्मन बन गया और उसने बगावत कर दी। उसने निज़ामशाह के पास जाकर आश्रय ले लिया। इसने शाहजहाँ को क्रोधित कर दिया और उसने दक्कन प्रदेशों के विरुद्ध आक्रामक रुख अपनाने का निर्णय कर लिया। शाहजहाँ का मुख्य उद्‌दश्ेय था दक्कन के खोए हुए प्रदेशों को वापस हासिल करना।

उसे विश्वास था कि दक्कन में अहमदनगर की स्वतंत्रता मुगल नियंत्रण के आड़े आ रही थी। उसने अहमदनगर को छोड़कर बीजापुर और मराठों को जीतने का निर्णय किया। इसमें उसे सफलता मिली। मलिक अम्बर के पुत्र फैथ ख़ान ने भी मुगलों से सुलह कर ली। अब महाबत ख़ान को दक्कन का सूबेदार नियुक्त किया गया। परन्तु दक्कन के राज्यों के साथ लड़ाई अभी भी जारी रही। अंत में सन् 1636 में बीजापुर और गोलकुंडा के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। बीजापुर के साथ समझौते की कुछ मुख्य शर्तें थीं:

1. आदिलशाह मुगलों की अधीनता स्वीकार करेगा।
2. उसे 20 लाख रुपए क्षतिपूर्ति के रुप में देने होंगे।
3. वह गोलकुंडा के मामलों में कोई दखलंदाजी नहीं करेगा।
4. बीजापुर और गोलकुंडा के बीच कोई विवाद होने पर मुगल शासक उनका बिचौलिया होगा।
5. शाहजी भौंसले के खिलाफ लड़ाई में आदिलशाह मुगलों की सहायता करेगा।

गोलकुंडा ने भी एक प थक संधि पत्र तैयार किया। इस संधि पत्र के अनुसार:

1. गोलकुंडा ने मुगल शासक के प्रति वफादारी की शपथ ली। उसने मुगल शासक के नाम को खुतबा में स्वीकार करने की सहमति दी और ईरान के शाह का नाम छोड़ दिया।
2. गोलकुंडा ने मुगलों को 2 लाख हूण प्रति वर्ष देने की सहमति दी।

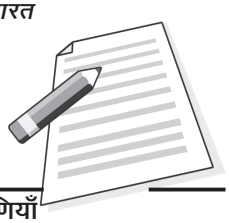

इन समझौतों से दक्कन में लड़ाइयों का अंत हो गया। अब मुगल अपना अधिकार क्षेत्र दक्षिण भारत के अधिकांश क्षेत्र तक फैलाने में कामयाब हो सके। 1656-57 में जब इन समझौतों की अनदेखी की गई तो मुगल नीति में एक विशिष्ट तब्दीली आई। अब शाहजहाँ ने औरंगजेब से दक्कन के साम्राज्यों के सभी प्रदेशों को जीतकर मुगल साम्राज्य के साथ जोड़ने का आदेश दिया। कुछ इतिहासकार ने यह तर्क दिया कि इस नीति के बदलने का कारण था, दक्कन के प्रदेशों में उपलब्ध संसाधनों का दोहन करना। परन्तु, इस परिवर्तन से मुगल साम्राज्य को कोई खास लाभ नहीं मिला बल्कि इससे भविष्य के लिए और अधिक समस्याएँ पैदा हो गईं।

औरंगजेब

औरंगज़ेब दक्कन के प्रति बहुत आक्रामक नीति अपनाने में विश्वास रखता था। प्रो. सतीश चन्द्र दक्कन प्रदेशों के प्रति उसकी नीति के तीन विभिन्न चरणों को रेखांकित करते हैं:

1. 1658 से 1668 के दौरान मुख्य लक्ष्य था बीजापुर से कल्याणी, बिदर और परेन्डा प्रदेशों को छीनकर अपने कब्जे में करना। इस चरण के दौरान मराठों के विरुद्ध दक्कन प्रदेशों से सुरक्षा सहायता पाने की कोशिशें की गई। दक्कन के सूबेदार जय सिंह ने भी बीजापुर को जीतने के प्रयास किए परन्तु असफल रहा।

2. 1668 से 1684 के दौरान इस नीति में थोड़ी तब्दीली की गई। आदिलशाह की म त्यु, शिवाजी की बढ़ती शक्ति और गोलकुंडा प्रशासन के दो भाइयों अखन्ना और मदन्ना ने मुगल नीति को प्रभावित किया। गोलकुंडा ने शिवाजी और बीजापुर के साथ गुप्त समझौता करने की कोशिश की। मराठों को घेरने की औरंगज़ेब की कोशिशों को कोई बहुत ज़्यादा कामयाबी नहीं मिली। कुछ छोटी–छोटी तब्दीलियों और जल्दी–जल्दी पैदा होने वाले तनाव किसी न किसी रुप में जारी रहे।

3. तीसरे चरण में (1684-87) औरंगज़ेब ने दक्कन के प्रदेशों को खुल्लमखुला अपने राज्य में शामिल करने की नीति अपनाई। औरंगज़ेब ने बीजापुर की घेराबंदी की खुद निगरानी की। 1687 से 1707 तक मराठों के साथ लड़ाई जारी रही। औरंगज़ेब ज़्यादातर वक्त तक दक्कन में रहा और उसने इस क्षेत्र को मुगल नियंत्रण के अधीन कायम रखा। परन्तु 1707 में उसकी म त्यु के बाद (दक्कन में औरंगाबाद में) उन्होंने फिर से स्वतंत्रता पाने के लिए प्रयास किया और बहुत कम समय में ही इसमें सफल हो गए। दक्कन के अतिरिक्त औरंगज़ेब उत्तर पूर्व क्षेत्र में असम तक मुगल शक्ति का विस्तार करने मे कामयाब रहा। इस क्षेत्र में मुगलों की सबसे बड़ी सफलता थी, अहोम साम्राज्य (असम) के मीर जुमला को बंगाल के सूबेदार के अधीन लाकर अपने साथ जोड़ना। एक अन्य महत्वपूर्ण उत्तर पूर्व की विजय थी, बंगाल के नए गवर्नर शाइस्ता ख़ान के अधीन 1664 में चटगांव की जीत। अहोम साम्राज्य पर बहुत लंबे समय तक सीधा नियंत्रण नहीं रखा जा सका। वहां तैनात मुगल फौजदार को विरोध सहना पड़ा और वहां नियमित रुप से लड़ाइयाँ होती रहती थीं। 1680 तक अहोम के शासकों ने कामरुप पर जीत हासिल कर ली और वहाँ मुगल नियंत्रण समाप्त हो गया।

पाठगत प्रश्न 10.4

1. दक्कन से कौन से शासक ने जहाँगीर के समय में मुगल सेनाओं को हराया?

2. मुगलों ने 1636 में दक्कन के किन दो प्रदेशों के साथ संधि पत्र पर हस्ताक्षर किए?

3. कौन सा मुगल सेनापति अहोम साम्राज्य को मुगल साम्राज्य के अधीन लाया?

4. दक्कन की किस शक्ति के साथ औरंगज़ेब को लंबे समय तक उलझे रहना पड़ा?

10.5 मुगल शासन के लिए चुनौतियाँ: लड़ाइयाँ और संधि की बातचीत

औरंगज़ेब के अधीन मुगल साम्राज्य ने अधिकतम प्रादेशिक सीमाओं तक अपनी पहुँच बना ली थी और लगभग आधुनिक भारत कहे जाने वाले संपूर्ण क्षेत्र को जीत लिया था। परन्तु उसका शासन जाटों, सतनामियाँ, अफ़गानियों, सिखों और मराठों की आम बगावतों से परेशान था। अकबर के अधीन राजपूत मुगलों की सहायता के एक महत्त्वपूर्ण आधार की तरह उभरे और बाद में जहाँगीर और शाहजहाँ के अधीन भी। परन्तु औरंगज़ेब के अधीन उन्होंने खुद को पराया अनुभव करना शुरु कर दिया और धीरे–धीरे प्रशासनिक ढांचे में उन्होंने अपना स्थान भी खो दिया। औरंगजेब के अधीन मराठों ने मुगलों की सत्ता को बहुत बड़ी चुनौती दी थी। दक्कन के प्रदेशों ने मुगलों की विस्तार योजनाओं का कड़ा विरोध किया। उत्तर पश्चिमी सीमांत प्रदेश में भी कुछ समस्या वाले स्थान थे और मुगलों को इन बाधाओं को दबाना पड़ा। इस प्रकार हम देखते हैं कि मुगल साम्राज्य की स्थापना और इसके विस्तार की प्रक्रिया के दौरान मुगलों को विरोध का सामना करना पड़ा और विविध उपायों और युद्ध नीतियों को अपनाकर अपने तरीके से समझौते करने पड़े। यहाँ हम उन सभी मामलों का संक्षिप्त विवरण देंगे।

राजपूत

राजपुताना में मेवाड़ एकमात्र ऐसा क्षेत्र था जो अकबर के शासन काल के दौरान मुगलों के अधीन नहीं आ सका। जहाँगीर ने इसे जीतने के लिए लगातार दबाव बनाए रखा। लड़ाइयों के एक लंबे सिलसिले के बाद राणा अमर सिंह ने अंत में मुगलों के आधिपत्य को मंजूर कर लिया। मेवाड़ से जीते गए सभी प्रदेश चितौड़ के किले सहित राणा अमर सिंह को लौटा दिये गए और इसके साथ ही उसके पुत्र कर्ण सिंह को एक बड़ी जागीर भी दी गई। जहाँगीद और शाहजहाँ के शासन के दौरान, राजपूतों ने आम तौर पर मुगलों के साथ मित्रता का व्यवहार किया और बहुत ऊँचे मनसबों तक काबिज़ रहे। शाहजहाँ को दक्कन और उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों की लड़ाइयों के लिए राजपूत सैनिकों पर अत्यधिक विश्वास था। औरंगजेब के शासन के दौरान, राजपूतों के साथ मुगलों के रिश्तों में दरार आ गई, खास तौर पर मारवाड़ के राजसिंहासन के उत्तराधिकारी के मामले में।

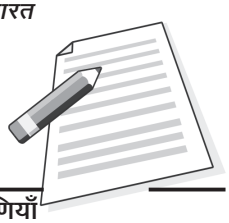

उत्तराधिकार को समर्थन देने के कारण राजपूत नाराज़ हो गए। जोधपुर पर उसका कब्जा भी मुगल राजपूत संबंधों के लिए एक और झटका साबित हुआ और धीरे–धीरे राजपूत मुगल शासन से अलग हो गए। असल में, आभिजात्य में शक्तिशाली राजपूत क्षेत्र के अभाव में मुगलों के लिए चारों तरफ के क्षेत्रों पर नियंत्रण रखने के काम में अंत में काफी नुकसान झेलना पड़ा, खास तौर पर तब, जबकि उन्हें मराठों से समझौता वार्ता करनी पड़ी।

दक्कन

अकबर के अंतिम दिनों में और जहाँगीर के प्रारंभिक दिनों में मलिक अम्बर के अधीन अहमदनगर ने मुगल ताकत को चुनौती देना शुरु कर दिया था। मलिक अम्बर बीजापुर का समर्थन पाने में भी कामयाब हो गया था। शाहजहाँ के शासन काल में अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुंडा के दक्कन साम्राज्यों में फिर से मुगलों के साथ लड़ाई शुरु हो गई थी। सबसे पहले अहमदनगर को हराया गया और इसके अधिकांश प्रदेशों को मुगल साम्राज्य के साथ जोड़ दिया गया था। 1636 तक आते–आते बीजापुर और गोलकुंडा को भी हरा दिया गया था, परन्तु इन साम्राज्यों को मुगल साम्राज्य के साथ नहीं जोड़ा गया था। एक संधि पत्र बनाने के बाद यह निर्णय हुआ कि हराए गए शासक वार्षिक नज़राना देंगे और मुगलों की सत्ता को स्वीकार करेंगे। लगभग दस वर्ष के लिए शाहजहाँ ने अपने पुत्र औरंगज़ेब को इस क्षेत्र में नियुक्त किया। औरंगजेब के शासन काल में दक्कन प्रदेशों और मराठों के साथ संघर्ष और भी गंभीर हो गया। असल में औरंगज़ेब ने अपने शासन के अंतिम 20 वर्ष दक्कन में लगातार युद्ध करते हुए व्यतीत किए। 1687 तक बीजापुर और गोलकुंडा के दक्कनी साम्राज्यों को मुगल साम्राज्य के साथ जोड़ दिया गया था। परन्तु दक्कन में औरंगजेब द्वारा खर्च किया गया समय और धन, मुगल साम्राज्य के लिए एक बहुत बड़ा अपव्यय साबित हुआ।

मराठा

17वीं सदी के मध्य में शिवाजी के नेत त्व के अधीन मराठे, दक्कन में बहुत शक्तिशाली बल के रुप में उभरे और उन्होंने मुगलों के अधिकार को चुनौती देना शुरु कर दिया। शिवाजी ने 1656 में अपनी आक्रामक कार्रवाइयाँ शुरु कर दी और जावली का राज्य अपने आधिपत्य में कर लिया। कुछ समय के बाद शिवाजी ने बीजापुर प्रदेश पर आक्रमण कर दिया, और 1659 में, बीजापुर के सुल्तान ने अपने जनरल अफजल खान को शिवाजी पर विजय प्राप्त करने के लिए भेजा। परन्तु शिवाजी उसकी (अफजल खाँ) तुलना में बहुत चतुर निकले और उन्होंने उसकी हत्या कर दी। अन्त में, 1662 में बीजापुर के सुल्तान ने शिवाजी के साथ एक समझौता किया जिसके तहत उन्हें जीते गए प्रदेशों का स्वतंत्र शासक मान लिया गया। अब शिवाजी ने मुगल प्रदेशों को नुकसान पहुँचाना शुरु कर दिया। औरंगज़ेब ने दक्कन के सूबेदार शाइस्ता खान को एक बहुत बड़ी सेना देकर शिवाजी के पास भेजा और उन दोनों के बीच पुरंदर के (1665 में) संधि पत्र पर हस्ताक्षर किए गए, जिसके तहत शिवाजी द्वारा जीते गए 35 किलो में से 23 किले मुगलों को वापस करने के लिए वह तैयार हो गया। शेष बचे 12 किले (जिनकी वार्षिक आय एक लाख थी) शिवाजी के पास छोड़ दिए गए। शिवाजी को आगरा के मुगल दरबार में आने का आग्रह किया गया। परन्तु जब शिवाजी वहाँ पहुँचे तो उनसे दुर्व्यवहार किया गया और उन्हें बन्दी बना लिया गया। वे 1666

में बच कर निकल भागे और रायगढ़ पहुँच गए। तब से लेकर उन्होंने मुगलों के विरुद्ध लगातार युद्ध जारी रखा। बहुत शीघ्र ही उन्होंने उन सभी किलों को वापस जीत लिया जो उन्होंने मुगलों को वापस किए थे। 1670 में उन्होंनें सूरत को दूसरी बार लूटा।

1674 में शिवाजी ने रायगढ़ को अपनी राजधानी बना लिया और राज्याभिषेक करवाने के बाद छत्रपति की उपाधि ग्रहण की। इसके कुछ ही समय बाद उन्होनें दक्षिण भारत में एक बड़ा अभियान चलाया और वेल्लौर में झिंजी और कर्नाटक में कई जिले जीत लिए। छह वर्ष तक शासन करने के बाद 1680 में उसकी म त्यु हो गई। इस छोटी सी अवधि में उसने मराठा साम्राज्य की नींव रखी जिसने लगभग डेढ़ शताब्दी तक पश्चिमी भारत में शासन किया। शिवाजी के उत्तराधिकारी थे उनके पुत्र सम्भाजी। बहुत से मराठा प्रमुखों ने सम्भाजी का समर्थन नहीं किया और शिवाजी के दूसरे पुत्र राजाराम की सहायता की। आंतरिक लड़ाई ने मराठा शक्ति को कमज़ोर कर दिया। अंत में औरंगज़ेब द्वारा सम्भाजी को पकड़ कर 1689 में मौत के घाट उतार दिया गया। सम्भाजी के उत्तराधिकारी बने राजाराम क्योंकि सम्भाजी के पुत्र बहुत छोटे थे। 1700 में राजाराम की म त्यु हो गई। उनके उत्तराधिकारी बने, उनकी माता तारा बाई के सिंहासन के अधीन, उनके छोटे पुत्र शिवाजी त तीय। मराठों के खिलाफ औरंग़ज़ेब की असफलता का मुख्य कारण था ताराबाई की उर्जा और उनकी प्रशासनिक प्रतिभा। परन्तु मुगल, मराठों को दो विरोधी गुटों में बाँटने में कामयाब हो गए एक तारा बाई के अधीन और दूसरा सम्भाजी के पुत्र, साहू के अधीन। साहू, जो बहुत लंबे समय तक मुगल दरबार में रहे थे, को छोड़ दिया गया। एक चितपावन ब्राह्मण, बालाजी विश्वनाथ की सहायता से उसने तारा बाई को शासन से हटाने में कामयाबी हासिल की।

उत्तर-पश्चिम

काबुल–गज़नी–कंधार को अकबर ने बहुत बिखरे हुए सीमांत प्रदेशों के रुप में समझा और इसीलिए 1595 में कंधार पर अपना कब्ज़ा कर लिया।

17वीं शताब्दी में उत्तर पश्चिमी सीमांत मुगलों की गतिविधियों का मुख्य क्षेत्र था। यहां 1625-26 तक रौशनाइयों को तो पूरी तरह हरा दिया गया था, परन्तु कंधार पारसियों और मुगलों के बीच आपसी लड़ाई का कारण बन गया। अकबर की म त्यु के बाद पारसियों ने सफावी शासक शाह अब्बास प्रथम के अधीन कंधार को जीतने की कोशिश की, परन्तु विफल रहे। इसके पश्चात 1620 में शाह अब्बास प्रथम ने जहांगीर को कंध ाार वापस उसे देने का अनुरोध किया, परन्तु उसने ऐसा करने से मना कर दिया। 1622 में, एक और आक्रमण करने के बाद, पारसियों ने कंधार को जीत लिया। शाहजहाँ के अधीन कंधार एक बार फिर मुगलों के हाथों में आ गया, परन्तु 1649 में पारसियों ने दोबारा इसे जीत लिया। कंधार को जीतने की जंग औरंगज़ेब के शासनकाल तक चलती रही परन्तु मुगलों को इसमें बहुत कम कामयाबी मिली। उज़्बेकों को अपने नियंत्रण में रखने के लिए शाहजहाँ को बलख की लड़ाई में बुरी तरह हार देखनी पड़ी और मुगलों को इस लड़ाई में धन और मानव–बल का भारी नुकसान उठाना पड़ा। औरंगज़ेब के शासन के अधीन कंधार के मामले को छोड़ दिया गया और पर्शिया के साथ राजनयिक संबंधों को दोबारा स्थापित किया गया।

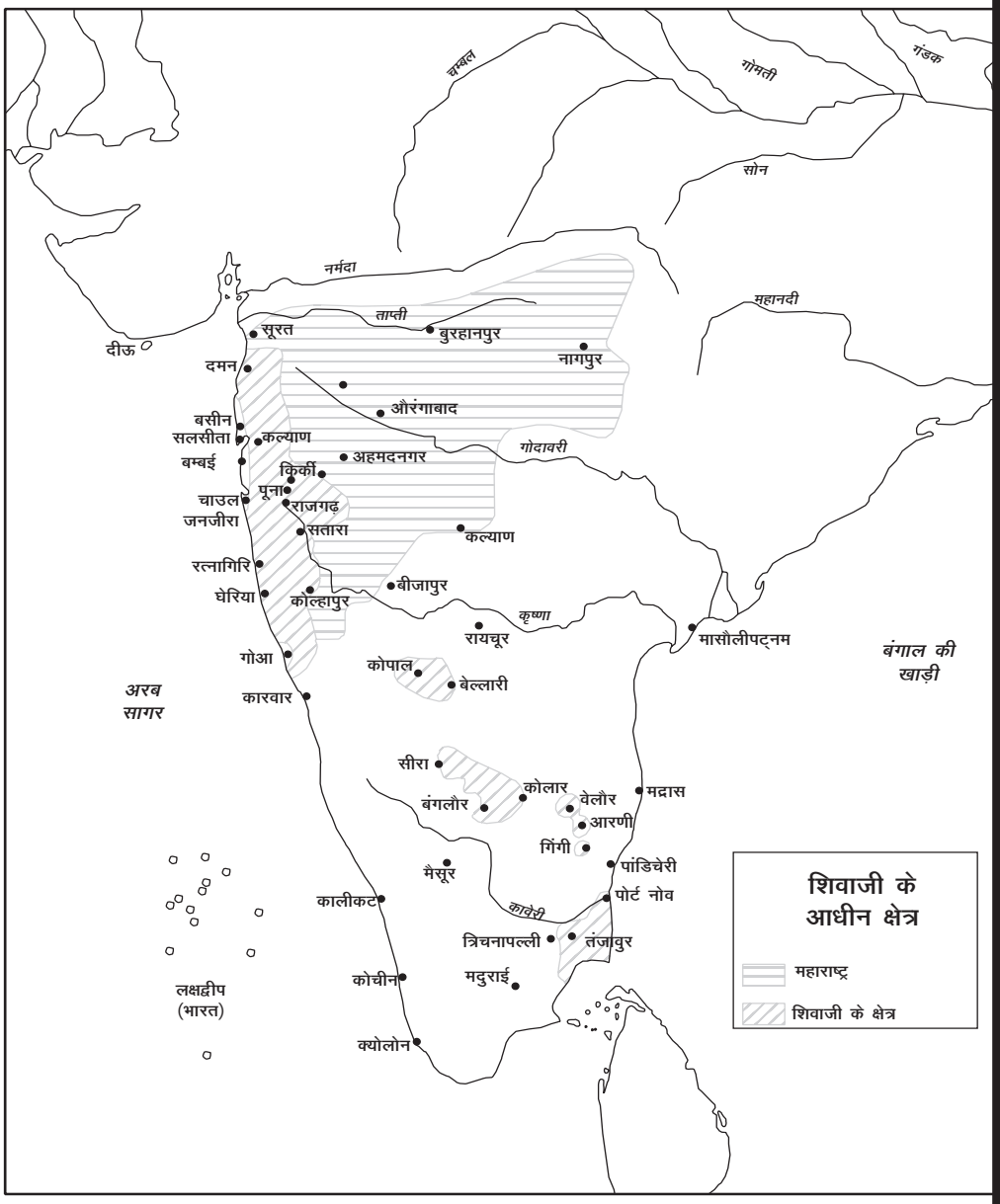

मानचित्र 10.4 शिवाजी के अधीन मराठा साम्राज्य

स्पष्ट है कि अकबर के शासन के अधीन मुगल साम्राज्य के प्रादेशिक विस्तार की नीति साम्राज्य की प्रमुख नीति बनी रही। औरंगज़ेब के अधीन दक्कन में और उत्तर पूर्वी क्षेत्र में छोटे से पैमाने पर इसका और अधिक विस्तार किया गया। उसके शासनकाल के दौरान मुगल साम्राज्य के पास बहुत बड़ा क्षेत्र था। परन्तु मुगल शासन के पतन के चिह्न भी औरंगज़ेब के शासन में ही दिखाई देने लगे थे। राजपूतों जैसी संभावित प्रादेशिक ताकतों के साथ संबंध टूटने और दक्कनी प्रदेशों और मराठों के साथ संबंधों में आई खटास ने मुगल साम्राज्य की एकता और स्थिरता को हिलाकर रख दिया। उसके उत्तराधिकारियों के अधीन साम्राज्य में विघटन होता रहा था।

पाठगत प्रश्न 10.5

1. शाहजहाँ ने किन शर्तों पर बीजापुर और गोलकुंडा में शांति स्थापित की?

2. दक्कन के लिए औरंगज़ेब की नीति क्या थी?

3. शिवाजी का राज्याभिषेक किस स्थान पर हुआ था? उन्होंने कौन सी उपाधि ली?

4. किस मुगल शासक को उत्तर पश्चिमी सीमांत की लड़ाइयों में भारी मात्रा में धन की हानि हुई?

आपने क्या सीखा

दिल्ली सल्तनत के विघटन के बाद 1526 में बाबर भारत में मुगल साम्राज्य स्थापित कर सका। मध्य एशिया और भारत की परिस्थितियाँ, दोनों ने ही मुगल साम्राज्य की नींव रखने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई। इससे पहले कि बाबर भारत में मुगल साम्राज्य की नींव रख पाता, उसे यहाँ के स्थानीय साम्राज्यों के शासकों से अनेक लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। उसने 1526 में पानीपत में इब्राहिम लोदी को हराया। इसके पश्चात 1527 में उसने उत्तर भारत की सबसे बड़ी शक्ति, राणा सांगा को हराया। 1530 में बाबर की म त्यु के बाद उसका पुत्र हुमायूँ उसका उत्तराधिकारी बना। जब हुमायूँ गुजरात में व्यस्त था तो शेरशाह ने बिहार और बंगाल में खुद को संगठित करना शुरु कर दिया और आगरा की तरफ बढ़ने लगा। 1540 में कन्नौज की लड़ाई में हुमायूँ हार गया और शेरशाह के लिए दूसरा अफ़गानी शासन स्थापित करना संभव हो सका। उसका राज 1540 से 1555 तक चलता रहा। परन्तु, 1555 में हुमायूँ दोबारा आगरा और दिल्ली और कुछ अन्य प्रदेश अफगानियों के हाथों से जीतने में कामयाब हुआ और वहाँ दोबारा मुगल शासन स्थापित किया। हुमायूँ की अचानक म त्यु होने के बाद अकबर 13 वर्ष की छोटी उम्र में शासक बना और बैरम ख़ान को उसका सहायक शासक नियुक्त किया गया। राज्य पर अपना नियंत्रण स्थापित करने के बाद अकबर ने विस्तार की नीति अपनाई। उसने विवाह संबंधों द्वारा अथवा उनके प्रदेशों पर आक्रमण करके राजपूत साम्राज्यों को अपने पक्ष में किया। उसने गुजरात, बिहार, बंगाल, पंजाब और संपूर्ण उत्तर पश्चिम को अपने नियंत्रण के अधीन किया। उसने दक्कन में अहमदनगर, बरार, बुरहानपुर, असीसगढ़ इत्यादि को भी अपने साम्राज्य में जोड़ा। जहाँगीर ने भी दक्कन में विस्तार की नीति को अपनाया। परन्तु उसे बहुत अधिक कामयाबी नहीं मिली और उसने अपने कुछ प्रदेश यहाँ खो दिए। 1636 में शाहजहाँ बीजापुर और गोलकुंडा पर अपना नियंत्रण स्थापित कर सका, औरंगज़ेब ने

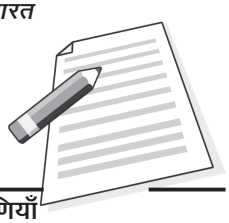

भी दक्कन में आक्रामक नीति को अपनाया और अपने शासन की अधिकांश अवधि के दौरान मराठों के साथ लड़ाइयों में उलझा रहा। औरंगज़ेब के अधीन मुगल साम्राज्य की सीमाएँ अधिकतम प्रदेशों तक फैली। विडंबना यह है कि औरंगज़ेब के शासनकाल में ही मुगल साम्राज्य का पतन होना शुरु हो गया था। राजपूतों और मराठों जैसी प्रादेशिक शक्तियों के साथ उसके संबंध टूटने लगे थे।

पाठांत प्रश्न

1. बाबर के अधीन, भारत में मुगल शासन की स्थापना की प्रारंभिक स्थिति का उल्लेख करें।
2. अकबर का सहायक शासक कौन था? अकबर के शासन के प्रारंभिक काल में भारत में कौन–कौन सी प्रमुख राजनीतिक शक्तियां थीं?
3. अकबर ने दक्कन में मुगलों की सर्वोच्चता कैसे स्थापित की?
4. राजपूतों के साथ औरंगज़ेब की नीति कैसे भिन्न थी?
5. औरंगजेब ने मराठों का मुकाबला कैसे किया?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

10.1

1. बाबर ने भारत पर इसलिए आक्रमण किया, क्योंकि मध्य एशिया में उसे कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा था। भारत की अस्थिर राजनीतिक परिस्थितियों ने भी इसमें एक भूमिका निभाई।
2. बाबर ने बड़े प्रभावी तरीके से रुमी (ओटोमैन) युद्ध–नीति लागू की।
3. बाबर ने इन समस्याओं का सामना किया:

   क) उसके आभिजात्य और कमांडर मध्य एशिया में वापस जाना चाहते थे।

   ख) सभी राजपूत राणा सांगा के नेत त्व में संगठित हो रहे थे।
4. राणा सांगा और मेदिनी राय

10.2

1. हुमायूँ शेरशाह को हराने में असफल रहा क्योंकि उसके भाई हिंदल मिर्ज़ा, जिसने उसकी सेना के लिए सामान की आपूर्ति करनी थी, ने खुद को स्वतंत्र घोषित कर दिया था।
2. शेरशाह एक महान रण कौशल युक्त योद्धा और योग्य सैनिक कमांडर था। हुमायूं को हराने के बाद वह अफगानियों का नायक बनकर सामने आया।
3. क) मालवा

ख) राजपुताना

ग) सिंध

घ) पंजाब

ड) बंगाल

4. (क) उसने सरकार और परगना स्तर पर स्थानीय प्रशासन को व्यवस्थित किया।

   (ख) उसने ग्रांड ट्रंक मार्ग बनवाया।

10.3

1. अकबर ने बैरम ख़ान को इसलिए बर्खास्त किया क्योंकि उसने पूरा नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया था और स्वतंत्र शासक के रुप में व्यवहार करने लगा था।
2. राजपूत, अफगानी, अहमदनगर, काबुल और कंधार
3. मेवाड़ के महाराणा प्रताप
4. चांद बीबी; अहमदनगर

10.4

1. मलिक अम्बर
2. बीजापुर ओर गोलकुंडा
3. मीर जुमला
4. मराठा

10.5

1. बीजापुर और गोलकुंडा ने मुगलों की अधीनता स्वीकार की और वार्षिक नज़राना देने की सहमति दी।
2. औरंगज़ेब ने आक्रामक नीति का अनुसरण किया और लगातार लड़ाइयों में ही उलझा रहा।
3. रायगढ़; छत्रपति
4. शाहजहाँ

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. देखें अनुच्छेद 10.1 का पैरा 4 और 5
2. बैरम खान;

   देखें अनुच्छेद 10.4 अकबर के नीचे
3. देखें अनुच्छेद 10.4 (दक्कन)
4. देखें अनुच्छेद 10.5 (राजपूत)
5. देखें अनुच्छेद 10.5 (मराठा)